नैनीताल उत्तराखंड उच्च न्यायालय

2005 के प्रतिवेदन संख्या 105

जिलाःदेहरादून

1-श्री मौसम अली .....याचिकाकर्ता

बनाम.

1-सिविल जज जे. डी. देहरादून और अन्य
2-1-सिविल जज जे. डी.
3-2-श्री अश्विनी कुमार
4-3-श्री विपिन कुमार .....प्रतिवादी ।

याचिकाकर्ता के अधिवक्ताःसुनील कुमार जैन प्रतिवादी अधिवक्ताःसी. एस. सी., अरविंद वशिष्ठ, पवन मिश्रा

उत्तराखंड उच्च न्यायालय, नैनीताल में

2005 की रिट याचिका (एम/एस) संख्या 105

श्री मौसम अली

.....याचिकाकर्ता/प्रतिवादी

बनाम

सिविल न्यायाधीश (जे. डी.), देहरादून और अन्य ....

.....प्रतिवादी

माननीय सुधांशु धूलिया, जे. (मौखिक)

1. श्री एस. के. जैन, वरिष्ठ अधिवक्ता, बी. एस. थिंड और श्री सिद्धार्थ जैन, अधिवक्ता, याचिकाकर्ता के लिए।

2. श्री पवन मिश्रा, अधिवक्ता, प्रतिवादी संख्या 2 और 3 के लिए ।

3. यह किरायेदार की याचिका है, जिसे सिविल जज (जूनियर डिवीजन), देहरादून द्वारा पारित आदेश दिनांक 11.10.2004 और आदेश दिनांक 12.01.2005 को चुनौती दी गई है।

4. एससीसी में एक लघु वाद न्यायालय मे मुकदमा संख्या 15/1999, किराये अवशिष्ट में व्यतिक्रम के आधार पर किराये के बकाये और निष्कासन के लिए याचिकाकर्ता/प्रतिवादी के विरुद्ध मकान मालिक/प्रत्यर्थी नं. 2 और 3 द्वारा दायर किया गया था। यह मुकदमा 01.07.2000 को एकतरफा घोषित किया गया था। इसके बाद मामला अमल मे आ गया। इस स्तर पर 30.04.2004 को किरायेदार/प्रतिवादी द्वारा आदेश 9 सिविल प्रक्रिया संहिता के नियम 13 मे एक आवेदन दिया गया था। प्रान्तीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम, 1887 की खंड 17 से, ऐसा आवेदन मात्र तभी अनुरक्षणीय है जब

इस आवेदन के प्रस्तुत किए जाने के समय आवेदक डिक्री से अपने द्वारा देय संपूर्ण डिक्री राशि न्यायालय में जमा करता है या डिक्री के पालन के लिए या निर्णय के अनुपालन के लिए ऐसी प्रतिभूति देता है जैसा न्यायालय पिछले अवसर से निदेशित करे।

5 . इस न्यायालय के समक्ष याचिकाकर्ता का मामला है कि उस तिथि को जब यह आवेदन सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 9 नियम 13 अर्थात् 30.04.2004 को प्रस्तुत किया गया था, उसने एक निविदा के रूप में पूरी डिक्री राशि जमा की थी, यद्यपि कुछ कारणों से, निविदा पारित नहीं की जा सकी थी। इसके बाद, प्रतिवादी/किरायेदार ने 28.05.2004 को एक आवेदन दिया, जिसमें कहा गया कि उसने प्रांतीय लघु वाद न्यायालयों की खंड 17 के तहत एक आवेदन दिया था, लेकिन चूंकि वह एक गरीब व्यक्ति है, इसलिए अपने सभी प्रयासों के बावजूद वह धन की व्यवस्था नहीं कर सका और राशि जमा नहीं कर सका। अब बहुत प्रयास के पश्चात वो अपने रिश्तेदारों से पैसे जुटा पाया है और अब वो पैसे जमा कर रहा है। उसने पुनः प्रार्थना की कि राशि जमा करने में हुई विलम्ब को माफ कर दिया जाए।

6. यद्यपि निचली अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंची कि प्रांतीय लघु वाद न्यायालयों में शामिल धारा 17 उपबंध अनिवार्य प्रकृति के हैं। प्रतिवादी द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 9, नियम 13 के तहत आवेदन प्रस्तुत करते समय राशि जमा नहीं की गई थी, और न्यायालय द्वारा 11.10.2004 दिनांकित आदेश द्वारा, आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था। 11.10.2004 दिनांकित उस आदेश के विरुद्ध प्रतिवादी/किरायेदार ने एक समीक्षा आवेदन दाखिल किया जो 12.01.2005 को भी अस्वीकार कर दिया गया था.

7. पीड़ित, याचिकाकर्ता/प्रतिवादी ने वर्तमान रिट याचिका दायर किया है।

8. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने सुना, श्री.एस. के. जैन, वरिष्ठ अधिवक्ता और श्री पवन मिश्रा ने प्रतिवादी/वादी के विद्वान अधिवक्ता के रूप में अभिलेख का अवलोकन किया।

9. याची का मामला है कि वह आवेदन जो याचिकाकर्ता/किरायेदार द्वारा 28.05.2004 को प्रस्तुत किया गया था, जो अभिलेख पर है, वास्तव वह आवेदन पूरी तरह से गलत है। याचिकाकर्ता एक अनपढ़ व्यक्ति है और आवेदन पत्र दायर करने मे

सक्षम नहीं था, जो उसके वकील द्वारा पेश किया गया था, जहां उसने 30.04.2004 को दायर अपने आवेदन में प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 17 में अनजाने मे कहा था कि वह डिक्री की राशि जमा नहीं कर सकता है, जबकि तथ्य यह है कि पूरी राशि 30.04.2004 को निविदा के माध्यम से जमा नहीं की गई थी, हालांकि, केवल 28.05.2004 को निविदा पारित की गई थी, जो याची की गलती नहीं है. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील प्रस्तुत करते हैं कि व्यापक शक्तियां न्यायाधीश, लघु वाद न्यायालय को दी गई हैं और उन्हें विलम्ब को माफ कर देना चाहिए था लेकिन ऐसा नहीं किया गया।

10. दूसरी ओर, प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता श्री पवन मिश्रा, याची के आवेदन की ओर इंगित करते हैं, जो पृष्ठ संख्या 36 पर संलग्न है, यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि मुकदमा 1 जुलाई, 2000, को एकपक्षीय रूप से डिक्री किया गया था और सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 9 नियम 13 के तहत वापसी के लिए आवेदन 30.07.2004 को पेश किया गया था, अर्थात् चार साल की अवधि के पश्चात, इसके साथ प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 17 के तहत आवेदन किया गया था, लेकिन डिक्री की राशि उस तिथि को जमा नहीं की गई थी। यह अभिलेख से स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता द्वारा 28.05.2004 को दूसरा आवेदन दिया गया था, जिसमें पैराग्राफ 2, 3 और 4 में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि उसने राशि जमा नहीं की थी। उसने आगे कहा कि उसने अब 28.05.2004 को पूरी राशि जमा करा दी है।

11. इसलिए प्रतिवादी/याचिकाकर्ता की ओर खंड यह स्पष्ट स्वीकारोक्ति है कि प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 17 के तहत उसका आवेदन पूरी डिक्री

राशि के साथ नहीं था। प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम, 1887 की धारा 17 इस प्रकार हैः

"17. सिविल प्रक्रिया संहिता का लागू होना-

(1) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) में विहित प्रक्रिया, जहां तक उस संहिता या इस अधिनियम द्वारा अन्यथा उपबंधित है], उसके द्वारा संज्ञेय सभी वादों में और ऐसे लघु वादों से उद्भूत सभी कार्यवाहियों में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया होगीः

परन्तु एकपक्षीय पारित डिक्री को अपास्त करने के आदेश के अपास्त या निर्णय के पुनर्विलोकन के अपास्त आवेदक, अपना आवेदन प्रस्तुत करते समय, डिक्री से या निर्णय के अनुसरण में अपने द्वारा देय रकम न्यायालय में जमा करेगा या [डिक्री के पालन के अपास्त या निर्णय के अनुपालन के अपास्त ऐसी प्रतिभूति देगा जो न्यायालय, इस निमित्त उसके द्वारा किए गए पूर्व आवेदन पर निदेशित करे]।

(2) जहां कोई व्यक्ति उपधारा (1) के परंतुक से प्रतिभू के रूप में दायी हो गया है, वहां प्रतिभूति सिविल प्रक्रिया संहिता, [1908] (1908 का 5) धारा [145] द्वारा उपबंधित रीति से प्राप्त की जा सकती है।

12. माननीय उच्चतम न्यायालय के निदेश को ध्यान में रखते हुए केदारनाथ बनाम मोहन लाल केसरी और अन्य का मामला, (2002) 2 एस. सी. सी. 16, मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 17 के उपबंधों का अनुपालन जरूरी है।

13. इसे ध्यान में रखते हुए, निचले न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं है। रिट याचिका इसके द्वारा खारिज की जाती है। आदेश की कोई लागत नहीं ।

(सुधांशु धूलिया, जे.)

23-12-2014

एमएल